क्षेत्रीय मार्गदर्शिका

THE MENTORING PROJECT

सीमाओं को निर्धारित करना: रिश्ते खराब किए बिना न कैसे कहें

ERIC YEE

(एरिक यी)

सीमाओं को निर्धारित करना: रिश्ते खराब किए बिना न कैसे कहें

ERIC YEE
(एरिक यी)

विषय-वस्तु

परिचय 4

भाग I: न कहने का लक्ष्य क्या है?.. 7

भाग II: आपको न कहने में मुश्किल क्यों होती है? (सिर) 10

भाग III: आपको न कहने में मुश्किल क्यों होती है? (हृदय) 19

भाग IV: आप न कैसे कहते हैं?.. 26

निष्कर्ष.. 37

अन्तिम टिप्पणियाँ 39

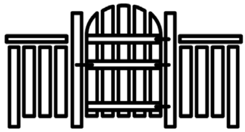

परिचय

शोंडा राइम्स कहती हैं कि "एक शब्द की शक्ति अद्भुत होती है।" वह स्वयं को एक "दिग्गज" मानती हैं, जो संसार भर में टीवी के चार नाटक, सत्तर घण्टे के कार्यक्रम और हर दौर में 35 करोड़ डॉलर की कमाई करती हैं।

वह एक शब्द क्या है?

"'हाँ' ने मेरा जीवन बदल दिया।' हाँ' ने मुझे बदल दिया।"[1]

परन्तु फिर, वॉरेन बफेट, जो जाने-माने निवेशक और परोपकारी व्यक्ति हैं, जिनकी कुल सम्पत्ति लगभग 150 अरब डालर है, इसके बिलकुल उलट ही तर्क देते हैं।

"सफल लोगों और सचमुच सफल लोगों में यही अन्तर है कि सचमुच सफल लोग लगभग हर बात के लिए 'न' कहते हैं।"[2]

कुछ लोग "हाँ" वाली छावनी में रहते हैं (कुछ लोकप्रिय फिल्मों के सन्देश के बारे में विचार करें[3]), और कुछ लोग "नहीं" वाली छावनी में रहते हैं (उत्पादकता सम्बन्धी बहुत सी पुस्तकों पर परामर्श के बारे में सोचें)।

अत:, इसमें से कौन सी सही रहेगी?

इस जीवन कौशल मार्गदर्शिका का शीर्षक *न कहना* रखा गया है, तो आपको यह लग सकता है कि हम नहीं वाली छावनी का समर्थन कर रहे हैं, परन्तु यह बिलकुल सत्य नहीं है।

हमारी रूचि किसी छावनी में शामिल होने में नहीं है, बल्कि अपने सृष्टिकर्ता, प्रभु परमेश्वर के साथ स्वयं को जोड़ने में है—जिसके स्वरूप में हमें रचा गया है।

तो क्या परमेश्वर हमसे हाँ करवाना चाहता है या न करवाना चाहता है?

वैसे, यह तो निर्भर करता है। किसे हाँ कहना है या किसे न कहना है? क्या करने के लिए कहना है? किस स्थिति में कहना है? किस क्षण में कहना है? किस कारण से कहना है?

और यह देखते हुए कि इस जीवन कौशल मार्गदर्शिका का उपशीर्षक *रिश्ते खराब किए बिना सीमाएँ निर्धारित करना* है, जिससे आपको लग सकता है कि सीमाएँ ठहराना हमेशा ही एक अच्छी बात है, परन्तु यह इतनी सरल बात नहीं है।

हाँ, यीशु ने कुछ सीमाएँ ठहराई थीं, विशेष रूप से जब शोर मचाती भीड़ उसका ध्यान खींचने का प्रयास कर रही होती थी, तब "वह जंगलों में अलग जाकर प्रार्थना किया करता था" (लूका 5:15-16; और इसकी तुलना मर. 1:35-39 से करें)।[4] परन्तु उसने अपनी व्यक्तिगत् सीमाएँ भी तोड़ी थीं; एक प्रसिद्ध घटना के अनुसार, यद्यपि यीशु अपने शिष्यों के साथ आराम करने के लिए एक जंगल में चला गया था, तौभी शाम ढलने तक उसने वहाँ लोगों को शिक्षा दी, उन्हें चंगा किया और पाँच हज़ार पुरुषों को भोजन खिलाया (यदि स्त्रियों और बच्चों को भी गिनें, तो यह संख्या और भी अधिक होगी!) (मत्ती 14:13-21; मर. 8:30-44; लूका 9:10-17; यूह. 6:1-13)।[5]

अत:, मसीही होने के नाते, हम इसका अर्थ कैसे समझें?

संक्षेप में कहें तो, बुद्धिमानी का अर्थ केवल हाँ कहना या न कहना नहीं है। मैं जानता हूँ कि हम सोचेंगे कि यह इतना ही आसान है, परन्तु ऐसा नहीं है।

आप स्वयं को किस ओर अधिक झुके हुए पाते हैं? हाँ की ओर या नहीं की ओर? सम्भवत: आप स्वयं में ही जानते हैं कि अपने आप से और अधिक की लगातार अपेक्षा करना कैसा लगता है। आप देर रात तक जागते हैं और सुबह जल्दी उठ जाते हैं, और तिस पर भी आपको लगता है कि दिन में इतना समय नहीं है कि आप उन सभी कामों को पूरा कर सकें, जिनके लिए आपने हाँ कहा है। आप स्वयं से कहते हैं कि यह बस व्यस्तता का एक दौर है, परन्तु यह दौर असल में कभी समाप्त ही नहीं होता। सम्भव है कि आप पहले से ही थक गए हों।

न कहना: रिश्ते खराब किए बिना सीमाओं को निर्धारित करना

मेरा भरोसा करें कि मैं इस दौर से होकर गुजर चुका हूँ। क्योंकि आप बाकी सब बातों को न कहने के लिए इच्छुक नहीं थे, इसलिए मैं जानता हूँ कि जब आपका मन और शरीर आखिरकार आपको नहीं कहना आरम्भ कर देते हैं, तो कैसा महसूस होता है। अत:, आप जानते हैं कि आपको न कहना आरम्भ करना है, परन्तु आपको इसके बारे में सोचना कैसे है? अधिकांश बातों की तरह, हमें एक लक्ष्य से आरम्भ करना होगा।

1

न कहने का लक्ष्य क्या है?

गलत लक्ष्य

जब हम आवश्यकता से अधिक हाँ कहने के बुरे प्रभाव महसूस करने लगते हैं, तो यह निष्कर्ष निकालना हमें परीक्षा में डाल देता है कि न कहने का लक्ष्य स्वयं का बचाव करना होना चाहिए। हम स्वयं से कहते हैं, “मुझे कुछ सीमाएँ निर्धारित करनी होंगी, जिससे कि मुझे फिर कभी थकान का अनुभव न हो।” हमारा जीवन पहले नियंत्रण से बाहर लग रहा था, इसलिए लक्ष्य यह होना चाहिए कि हमारे जीवनों पर नियंत्रण पाया जाए, है न?

और यदि स्वयं का बचाव करना ही लक्ष्य है, तो सीमाओं को वैसे ही समझना स्वभाविक है जैसा कि इसे आमतौर पर समझा जाता है—“सीमाएँ निजी सम्पत्ति की उन रेखाओं की तरह होती हैं, जो इस बात पर सीमाएँ निर्धारित करती हैं कि आप कौन हैं और आप कौन नहीं हैं, और ये आपके जीवन के सभी क्षेत्रों को—शारीरिक रूप से, मानसिक रूप से, भावनात्मक रूप से और आत्मिक रूप से—प्रभावित करती हैं। किसी सीमा को परिभाषित करने का अर्थ इन सीमाओं को स्थापित करना और अपने जीवन के उन हिस्सों की रक्षा करना है, जो सबसे अधिक महत्व रखते हैं।” परन्तु समस्या यह है कि इन सबका आरम्भिक और अन्तिम बिन्दु मैं ही हूँ। हम जो हैं, उसे सीमाएँ आकार देती हैं, और नहीं कहने का लक्ष्य हमारे कल्याण को बनाए रखना है। परन्तु हमारे लिए सीमाएँ निर्धारित कौन करता है? परमेश्वर के वचन में निर्धारित की गईं सीमाएँ ही असल में हमारी पहचान को आकार देती हैं। जबकि हो सकता है कि हम अपनी निजी सीमाएँ निर्धारित करें, परन्तु अन्त में परमेश्वर ही हमारे उद्देश्य और पहचान को परिभाषित करता है।.

सीमाओं पर केन्द्रित जीवन जीना, असल में स्वयं पर केन्द्रित जीवन जीने का एक बहाना बन जाता है। और यह अच्छी बात नहीं है।

सही लक्ष्य

इसके विपरीत, परमेश्वर के वचन के अनुसार, सभी बातों का आरम्भिक और अन्तिम बिन्दु मैं नहीं, बल्कि परमेश्वर है। पौलुस लिखता है, “क्योंकि उसी की ओर से, और उसी के द्वारा, और उसी के लिये सब कुछ है। उसकी महिमा युगानुयुग होती रहे: आमीन” (रोमि. 11:36)। अत:, परमेश्वर की महिमा ही सब बातों का लक्ष्य है, जिसमें न कहना भी शामिल है।

हम मनमाने ढंग से सीमाएँ निर्धारित करके स्वयं को अपनी तरह से परिभाषित नहीं कर सकते; बल्कि जो परमेश्वर हमारा सृष्टिकर्ता और छुड़ानेवाला है, वही निर्धारित करता है कि हम कौन हैं और कौन नहीं हैं, और वही हमारे जीवन के सभी क्षेत्रों को—शारीरिक रूप से, मानसिक रूप से, भावनात्मक रूप से, आत्मिक रूप से—प्रभावित करता है। इस कारण, न कहने या सीमाएँ निर्धारित करने का अर्थ अपने जीवन पर नियंत्रण करना नहीं है, बल्कि यह एक ऐसा साधन है, जो आपको परमेश्वर-की-महिमा करने वाला जीवन जीने में सहायता करता है।

एक ओलंपिक की दौड़ के बारे में सोचिए। एक धावक जो केवल बेहोश होने से बचना चाहता है, उसके विपरीत एक और धावक है, जो दौड़ते हुए अपने देश का अच्छे से प्रतिनिधित्व करने की लक्ष्य रखता है—इन दोनों के बीच आकाश-पाताल का अन्तर है। पहला धावक सम्भवत: इस डर से अपना सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन नहीं कर पाएगा कि कहीं वह बेहोश न हो जाए; और दूसरा धावक न केवल अपना सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करेगा, बल्कि इस तरह दौड़ेगा कि वह दौड़ पूरी करे और जिस देश का प्रतिनिधित्व कर रहा है, उसे सम्मान दिलाए।

मैं यह बात मनगढ़ंत नहीं कह रहा हूँ! सन् 1968 में मेक्सिको सिटी में हुए ओलंपिक खेलों की पुरुषों की मैराथन दौड़ के दौरान, जब धावक अपनी जगह बनाने के लिए एक दूसरे से होड़ कर रहे थे, तब तंज़ानिया के जॉन स्टीफ़न अखवारी ऐंठन होने के कारण भूमि पर गिर पड़े। इसके परिणामस्वरूप, उनका कंधा पटरी पर जोर से टकराया और उनके घुटने पर गहरा घाव हो गया, जिससे वह जोड़ अपनी जगह से खिसक गया। परन्तु, जहाँ दौड़ आरम्भ करने वाले 75 धावकों में से 18 ने दौड़ बीच

में ही छोड़ दी थी, वहीं अखवारी आगे बढ़ते रहे। उन्होंने लंगड़ाते हुए बाकी की दूरी तय की और विजेता के द्वारा समाप्ति रेखा पार करने के एक घण्टे से भी अधिक समय बाद मैदान में पहुँचे। भीड़ ने खड़े होकर उनका स्वागत किया। जब उनसे पूछा गया कि यह मालूम होने पर भी कि उनके जीतने का कोई भी अवसर नहीं है, उन्होंने दौड़ क्यों नहीं छोड़ी, तो उन्होंने उत्तर दिया, "मेरे देश ने मुझे 5,000 मील दूर केवल दौड़ आरम्भ करने के लिए नहीं भेजा था; उन्होंने मुझे 5,000 मील दूर दौड़ पूरी करने के लिए भेजा था।"[6]

इसी तरह, हमारे परमेश्वर ने हमें केवल इसलिए नहीं बनाया और इसलिए नहीं छुड़ाया कि हम बस थकान से बचें और स्वयं को सुरक्षित रखें, बल्कि इसलिए बनाया कि हम अपनी "दौड़" पूरी करें और परमेश्वर की महिमा की खोज करें (2 तीमु. 4:7-8)। पौलुस ने कुरिन्थियों को लिखा, "इसलिये तुम चाहे खाओ, चाहे पीओ, चाहे जो कुछ करो, सब कुछ परमेश्   वर की महिमा के लिये करो" (1 कुरि. 10:31)।

जो कुछ भी हम करते हैं, जिसमें नहीं (या हाँ) कहना भी शामिल है, हमें स्वयं से पूछना चाहिए कि क्या हम यह परमेश्वर की महिमा के लिए कर रहे हैं ("क्या इसमें मेरी इच्छा या लक्ष्य, परमेश्वर के चरित्र और उद्देश्यों को दिखाना और उनका गुणगान करना है?")।

फिर भी, भले ही हम उस सही लक्ष्य के साथ जुड़ जाएँ, तौभी हो सकता है कि हमें न कहने में मुश्किल हो।

ऐसा क्यों है? इसी बात को हम अगले दो भागों में सम्बोधित करेंगे।

मनन के लिए प्रश्न:

1. क्या आप ऐसे मनुष्य हैं, जो हाँ या न कहने की ओर ही अधिक झुके रहते हैं? हाँ या न कहने के आपके क्या कारण या प्रेरणाएँ हैं?
2. यदि पीछे मुड़कर आप पिछले कुछ महीनों के अपने निर्णय लेने के तरीके पर दृष्टि डालें, तो आपका लक्ष्य क्या रहा है? क्या यह स्वयं को सुरक्षित रखने की तरफ अधिक झुका हुआ था या परमेश्वर की महिमा करने की तरफ अधिक झुका हुआ था?

2

आपको न कहने में मुश्किल क्यों होती है? (सिर)

विश्वासयोग्यता की बिगड़ी हुई समझ

“धन्य, हे अच्छे और विश् वासयोग्य दास” (मत्ती 25:21, 23)। ये वे शब्द हैं, जिन्हें हम सभी एक दिन प्रभु यीशु से सुनने की चाह रखते हैं।

परन्तु मेरे लिए, समस्या यह थी कि “विश्वासयोग्य” होने का क्या अर्थ है, इस बारे में मेरी समझ बिगड़ी हुई थी। विश्वविद्यालय के एक छात्र के तौर पर मसीही बनने के बाद, मुझे बार-बार यह बताया गया कि “हर बात का उठना और गिरना नेतृत्व पर निर्भर करता है,”[7] जो कि इस बात को कहने का दूसरा तरीका था कि हर बात का उठना और गिरना मुझ पर निर्भर करता है।

ऐसा क्यों है? क्योंकि एक मसीही के तौर पर, मैं एक अगुवा हूँ।

ऐसा क्यों है? क्योंकि हर मसीही को चेले बनाने—या दूसरों को प्रभावित करने—के लिए बुलाया गया है, और “प्रभाव डालना ही नेतृत्व करना है—इससे अधिक या इससे कम कुछ भी नहीं है।”[8]

और एक अगुवे के तौर पर मेरी जिम्मेदारी का क्षेत्र क्या है? इसमें सब कुछ आता है।

मैं उदाहरण स्थापित करता हूँ। मैं अपनी क्षमता से बढ़कर काम करता हूँ। मैं यह निश्चित करता हूँ कि कोई भी काम अधूरा न रह जाए।

इस प्रतिमान में, (किसी भी बात के लिए) न कहना विश्वासघात करना था, और (हर बात के लिए) हाँ कहना विश्वासयोग्य रहना था। ऐसी "विश्वासयोग्यता" का अर्थ हवा का पीछा करने जैसा है, परन्तु फिर भी मैं उसका पीछा करता रहा।

मैंने अधिकाधिक जिम्मेदारियाँ उठा लीं और अधिकाधिक परिश्रम किया। मैं इतना अधिक "विश्वासयोग्य" साबित होना चाहता था कि इस प्रक्रिया में मैं पूरी तरह से थक गया, और काम करने के योग्य ही नहीं रहा। पीछे मुड़कर देखने पर, मैं अमेरिकी हास्य अभिनेत्री लिली टॉमलिन की बात से पूरी तरह सहमत हूँ, जिन्होंने कहा था: "मैं हमेशा किसी विशेष व्यक्ति की तरह बनना चाहती थी, परन्तु अब मुझे एहसास होता है कि मुझे और अधिक विशिष्ट होना चाहिए था।"

और मैंने सोचा कि "मैं हमेशा विश्वासयोग्य बनना चाहता था, परन्तु अब मुझे एहसास होता है कि मुझे और अधिक विशिष्ट होना चाहिए था।"

विश्वासयोग्यता के बारे में हमारी अपनी विशेष समझ न तो स्वयं से बनाई हुई होनी चाहिए और न ही संसार से उधार ली हुई होनी चाहिए। इसके बजाय, यह परमेश्वर के वचन के द्वारा परिभाषित की गई स्वस्थ सीमाओं से आनी चाहिए। केवल स्वामी ही यह निर्धारित करता है कि उसके दासों के लिए विश्वासयोग्यता का क्या अर्थ होता है—और उसने अपने पवित्रशास्त्र में इसे बताया है। जब हम इस बात के अर्थ से अनभिज्ञ होते हैं कि बाइबल सीमाओं को कैसे परिभाषित करती है, तो हम अक्सर अपने ऊपर बाइबल से बाहर के ऐसे बोझ लाद लेते हैं, जिन्हें उठाना असम्भव होता है। और सीमाएँ निर्धारित किए बिना, हम उस बात को अनदेखा करने का जोखिम उठाते हैं, जो सच में महत्व रखता है—जो कि हर सांसारिक अपेक्षा को पूरा करने के हमारे प्रयास नहीं, बल्कि परमेश्वर की बुलाहट के प्रति हमारी विश्वासयोग्यता है।

विश्वासयोग्यता के न्यूनतम मानक

जीवन के अलग-अलग क्षेत्रों में विश्वासयोग्यता के लिए बाइबल के न्यूनतम मानक क्या हैं?[9] हो सकता है कि यह पूछना एक अजीब सा प्रश्न लगे, परन्तु इस प्रश्न का उत्तर देने में सक्षम हुए बिना, हम ठीक से यह निर्धारित भी नहीं कर सकते कि विश्वासयोग्य होने का अर्थ क्या है। यदि हमें

विश्वासयोग्य बनना है, तो फिर कोई न कोई ऐसा मानक अवश्य होना चाहिए, जिसे हम पूरा करें; अन्यथा, हमारे पास यह जानने का कोई आधार नहीं होगा कि हम असल में विश्वासयोग्य हैं या नहीं।

मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि हमें केवल न्यूनतम का लक्ष्य रखना चाहिए (कई बार हम उससे अधिक भी कर सकते हैं), परन्तु विश्वासयोग्यता कम से कम न्यूनतम मानकों को पूरा करने से परिभाषित होती है।

मसीही होने के नाते, हमारे जीवन के तीन मुख्य क्षेत्र परिवार, कलीसिया और काम होते हैं।[10]

परिवार के सम्बन्ध में, विश्वासयोग्यता के न्यूनतम मानक सम्भवत: हममें से अधिकांश लोगों की सोच से कहीं अधिक ऊँचे हैं। पत्नियों को चाहिए कि "अपने अपने पति के ऐसे अधीन रहो जैसे प्रभु के," और पतियों को चाहिए कि "अपनी अपनी पत्नी से प्रेम रखो जैसा मसीह ने भी कलीसिया से प्रेम करके अपने आप को उसके लिये दे दिया कि उसको वचन के द्वारा जल के स्‌ नान से शुद्ध करके पवित्र बनाए" (इफि. 5:22, 25-26)। बच्चों को चाहिए कि "अपने माता और पिता का आदर करें," और माता-पिता को चाहिए कि "प्रभु की शिक्षा और चेतावनी देते हुए उनका पालन-पोषण करें" (इफि. 6:1-2, 4)।

कलीसिया के सम्बन्ध में, विश्वासयोग्यता के न्यूनतम मानकों में एक स्थानीय कलीसियाई जीवन के प्रति सार्थक प्रतिबद्धता और जुड़ाव शामिल है। मसीहियों के लिए बाइबल के रूपक सामूहिक स्वभाव के हैं—झुण्ड में भेड़ें (यूह. 10:14-16), एक देह के अंग (1 कुरि. 12:27), एक घराने के सदस्य (1 तीमु. 3:15), एक मन्दिर के पत्थर (इफि. 2:21), और परमेश्वर के राज्य के नागरिक (फिलि. 3:20)। इसके अलावा, नये नियम में मसीहियों के लिए "एक दूसरे के प्रति" वाली कई आज्ञाएँ मिलती हैं, जिन्हें नियमित तौर पर कलीसियाई वाचा के रूप में सारांशित किया जाता है। सामान्य तौर पर, हमें एक दूसरे से प्रेम करना चाहिए (1 पत. 2:17; गला. 5:13; 6:10; इफि. 4:32; रोमि. 15:1; 12:10, 13, 15-16), एक दूसरे को प्रोत्साहित करना चाहिए (1 थिस्स. 5:11; इब्रा. 10:24-25), एक दूसरे की रक्षा करनी चाहिए (इब्रा. 3:12-13; 12:15-16; मत्ती 18:15-17; 1 कुरि. 5:1-5), और अपने अगुवों की आज्ञा माननी चाहिए (इब्रा. 13:17; 1 पत. 5:5)—और ये सभी बातें एक स्थानीय कलीसियाई जीवन में जी जानी चाहिए।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि यदि आप स्वेच्छा से कलीसिया में विशेष भूमिकाएँ और जिम्मेदारियाँ निभाते हैं (जैसे कि प्राचीन, सेवक, कोषाध्यक्ष, लिपिक, छोटे समूह का अगुवा, बच्चों की सेवकाई का शिक्षक, आदि), तो फिर इस क्षेत्र में विश्वासयोग्यता के न्यूनतम मानक उन अतिरिक्त जिम्मेदारियों के अनुरूप बढ़ जाएँगे। परन्तु एक कलीसियाई सदस्य के तौर पर, विश्वासयोग्यता के न्यूनतम मानक बस यही हैं कि आप प्रभु के दिन में आराधना के लिए अपनी कलीसिया के साथ नियमित रूप से इकट्ठे हों, और कलीसिया में दूसरों के साथ सार्थक रिश्ते बनाए रखें, जिनमें आप जानते-समझते हुए अपने साथी सदस्यों का आत्मिक भला कर रहे हों।

उन रिश्तों में, सीमाएँ निर्धारित करना भावनात्मक और आत्मिक दोनों तरह के स्वास्थ्य को बनाए रखने का एक अनिवार्य हिस्सा है। किसी रिश्ते की सीमा को समझना, उन सीमाओं को परिभाषित करने में सहायता कर सकता है, जो आपसी सम्मान और व्यक्तिगत् कल्याण सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हैं। उदाहरण के लिए, एक स्वस्थ रिश्ते की सीमाएँ दूसरों को प्रेम और सेवा प्रदान करते हुए भी लोगों को अपना समय, ऊर्जा और भावनाएँ सुरक्षित रखने की अनुमति देती हैं। इन सीमाओं का अर्थ दूसरों को बाहर निकालना नहीं, बल्कि यह परिभाषित करना है कि इसमें शामिल दोनों पक्षों के लिए स्वस्थ और टिकाऊ क्या है।

किसी रिश्ते में सीमाएँ कैसे निर्धारित की जाएँ, यह जानना तब और भी अधिक आवश्यक हो जाता है, जब हम अपने आत्मिक स्वास्थ्य का नुकसान किए बिना दूसरों से अच्छी तरह प्रेम करना चाहते हैं। स्पष्ट सीमाएँ निर्धारित करने से थकान से बचने में सहायता होती है और यह सुनिश्चित होता है कि हम अपने सभी व्यवहारों में यह मानते हुए परमेश्वर का सम्मान करें कि उसने हमें अपनी देखभाल करने के साथ-साथ सेवा करने में सन्तुलन बनाने के लिए बुलाया है।

काम (अर्थात् हमारे पेशे) के सम्बन्ध में, विश्वासयोग्यता के न्यूनतम मानक सम्भवत: हममें से अधिकांश लोगों की समझ से बहुत कम हैं। हमें लगन से काम करना चाहिए (कुलु. 3:23-24) कि हम अपना गुजारा कर सकें (2 थिस्स. 3:10-12), अपने परिवार की आवश्यकताएँ पूरी कर सकें (1 तीमु. 5:8), और आवश्यकता-ग्रस्त लोगों की सहायता कर सकें (इफि. 4:28)। ऐसी नौकरी मिलना बहुत अच्छा है, जो आपके वरदानों और प्रतिभाओं का पूरा उपयोग करती हो, और जो आपको सार्थक लगे और जिसे करने में आनन्द मिले, परन्तु विश्वासयोग्यता के लिए ये माँगें बाइबल

से नहीं है।[11] संसार भर के अधिकांश लोगों को, चाहे वे अतीत के हों या वर्तमान के हों, ये विशेषाधिकार नहीं मिले, तब पर भी वे अपना गुजारा करने, अपने परिवार की आवश्यकताएँ पूरी करने, और आवश्यकता में पड़े लोगों की सहायता करने के लिए लगन से काम करके भी विश्वासयोग्य बने रह सकते हैं।

जब हम इस बात के अर्थ से अनभिज्ञ होते हैं कि बाइबल सीमाओं को कैसे परिभाषित करती है, तो हम अक्सर अपने ऊपर बाइबल से बाहर के ऐसे बोझ लाद लेते हैं, जिन्हें उठाना असम्भव होता है। और इस संदर्भ में, सीमाएँ निर्धारित करने से हमें यह सुनिश्चित करते हुए कि हम जीवन के अन्य क्षेत्रों की उपेक्षा किए बिना अपने कर्तव्यों के प्रति विश्वासयोग्य बने रहें, अपने समय और जिम्मेदारियों को प्रभावी ढंग से सम्भालने में सहायता मिल सकती है।

जब हम विश्वासयोग्यता के इन न्यूनतम मानकों को समझ लेते हैं, तो हम बुद्धिमानी से भरे निर्णय लेने की बेहतर जानकारी रखते हैं। हो सकता है कि आपको परिवार के साथ अधिक घूमने-फिरने, कलीसिया में अधिक सेवा करने, या रात में और सप्ताह के अन्त में काम करने के लिए भीतरी या बाहरी दबाव महसूस हो, परन्तु यदि इसके कारण आप जीवन के दूसरे पहलुओं में विश्वासयोग्यता के न्यूनतम मानकों को पूरा नहीं कर पाते, तो आपको न कहना ही होगा—और आप ऐसा शुद्ध विवेक के साथ यह जानते हुए कर सकते हैं कि न कहने का अर्थ ही विश्वासयोग्य होना है।

कई मामलों में, बाइबल की सीमाएँ ऐसे निर्णय लेने में हमारा मार्गदर्शन करती हैं। बाइबल में बताई गई सीमाएँ अक्सर इस बात से जुड़ी हुई होती हैं कि हम अपना समय, अपने संसाधन और अपने रिश्तों को यह सुनिश्चित करते हुए कैसे सम्भालते हैं कि हम पर काम का बहुत अधिक बोझ न पड़े और हम अपनी मुख्य प्रतिबद्धताओं से न भटकें।

सिद्धान्त बनाम रूप

ध्यान दें कि बाइबल विश्वासयोग्यता के लिए जो कुछ भी बताती है, उसमें अधिकांश बातें रूप होने के बजाय सिद्धान्त हैं। सिद्धान्त बताते हैं कि हमें क्या करना है, और रूप बताते हैं कि हमें वह कैसे करना है। उदाहरण के लिए, यदि सिद्धान्त यह है कि "प्रभु की शिक्षा और चेतावनी देते हुए [अपने बच्चों का] पालन–पोषण करो," तो इसका एक रूप प्रतिदिन परिवार के साथ मिलकर आराधना करना हो

सकता है। और मुझे व्यक्तिगत् रूप से ऐसा लगता है (और इतिहास में भी बहुत से लोगों को ऐसा ही लगता था) कि नियमित रूप से परिवार के साथ आराधना करना एक बुद्धिमानी से भरा काम (या रूप) है,[12] परन्तु इस सिद्धान्त को पूरा करने का यह अकेला तरीका नहीं है।

हमारे मनों में बाइबल के सिद्धान्तों और व्यावहारिक रूपों के बीच स्पष्ट अन्तर होना आवश्यक है, क्योंकि यदि हम कुछ रूपों को बाइबल से बताए गए के रूप में गलत समझ लेते हैं, जबकि वे बाइबल से नहीं होते, तो हम स्वयं को विश्वासघाती समझने लगेंगे, जबकि शायद हम ऐसे न हों।

उदाहरण के लिए, क्या बाइबल हमें कलीसिया में ऐसे पारदर्शी रिश्ते बनाए रखने के लिए कहती है, जिनमें हम सोच-समझकर एक दूसरे की आत्मिक भलाई करें (जैसे, शिष्य बनाने वाले रिश्ते होते हैं)? हाँ (सभी "एक दूसरे के प्रति" वाली आज्ञाएँ देखें)। परन्तु क्या बाइबल हमसे हर सप्ताह किसी छोटे समूह का हिस्सा बनने की माँग करती है? नहीं। क्या आप किसी छोटे समूह का हिस्सा न होते हुए भी, दूसरों को यीशु का अनुसरण करने में सहायता करने के बाइबल के सिद्धान्त को सार्थक रूप से जी सकते हैं? हाँ। क्या किसी छोटे समूह का हिस्सा होने का अर्थ स्वत: ही यह हो जाता है कि आप ऐसे शिष्य बनाने वाले रिश्ते में हैं? नहीं।

सिद्धान्तों और रूपों को अलग-अलग रखने से हमें बाइबल के सिद्धान्तों को लागू करने के तरीके में अधिक लचीलापन रखने में सहायता मिलती है (और हम दूसरों के प्रति तथा स्वयं के प्रति कम आलोचनात्मक होते हैं)।

सीमाएँ निर्धारित करना इस लचीलेपन का एक अहम पहलू है। स्पष्ट सीमाएँ बनाए रखकर, हम परमेश्वर के द्वारा बताए गए आवश्यक रूपों पर ध्यान लगा सकते हैं, जैसे कि बिना किसी दूसरे दायित्व के बोझ तले दबे हुए संस्कारों में और प्रभु के दिन में भाग लेना।

ऐसा कहने के साथ ही, बाइबल कुछ रूपों के बारे में बताती है। उदाहरण के लिए, जब स्थानीय कलीसिया की बात आती है, तो परमेश्वर हमें केवल सिद्धान्तों के साथ नहीं छोड़ देता, बल्कि वह हमें अलौकिक रूप से बताए गए रूप भी प्रदान करता है। वह बपतिस्मा और प्रभु-भोज के संस्कारों को इसलिए निर्धारित करता है, कि विश्वासियों को अविश्वासियों से अलग करे और कलीसिया को पृथ्वी पर दृश्यमान बनाए (1 कुरि. 12:13; 10:17; 11:17-34; मत्ती 16:13-19; 18:15-20;

28:18-20)। वह प्रभु के दिन को एक ऐसे दिन के रूप में बताता है, जिसे विशेष रूप से विश्राम करने और सार्वजनिक आराधना करने के लिए कलीसिया के तौर पर इकट्ठा होने के लिए अलग रखा गया है (प्रेरि. 20:7; 1 कुरि. 16:1-2; प्रका. 1:10)। वह प्राचीनों के काम का विवरण देता है (प्रेरि. 6:4; 20:17-35; 1 और 2 तीमु. की पत्रियाँ; तीतुस की पत्री; 1 पत. 5:1-4)। इस कारण, हमें यह जानना होगा कि इन तरीकों को अनदेखा करना, उनकी जगह कुछ और करना, या उन्हें गलत तरीके से अपनाना ही विश्वासघात करना है।

विश्वासयोग्यता के भाग के रूप में आनन्द लेना

बहुत लम्बे समय तक, मुझे अपने आनन्द के निमित्त कुछ भी करने पर अपराध-बोध होता था ("यह मेरे समय का सही उपयोग नहीं है; मुझे कोई और काम करना चाहिए")। मुझे बैठ जाने पर बेचैनी होती थी ("निश्चय ही, कुछ तो ऐसा आवश्यक काम होगा, जिसे मैं अभी कर सकता हूँ"), और मैं स्वयं को काल्पनिक कहानियाँ पढ़ने की अनुमति नहीं देता था ("मुझे ऐसी गैर-काल्पनिक पुस्तकें पढ़नी चाहिए, जो मुझे अपने काम में बेहतर बनने में सहायता करें")। मुझे लगता था कि अपना इन्कार करने, अपना क्रूस उठाने, और यीशु के पीछे हो लेने (मत्ती 16:24; मर. 8:34; लूका 9:23) का अर्थ किसी तरह यह है कि मैं अपने आनन्द के निमित्त कुछ भी नहीं कर सकता। केवल किसी बात का आनन्द लेने के लिए दूसरे लोगों को या कामकाजी गतिविधियों को न कहना मेरे लिए अकल्पनीय था। यदि मुझे किसी बात का आनन्द लेना होता, तो वह सोच-समझकर किसी और व्यक्ति या लोगों के समूह के साथ, संगति रखने के निमित्त किया जाना चाहिए था। मेरी विश्वासयोग्यता की परिभाषा में आनन्द लेना नहीं था।

परन्तु फिर, मुझे सभोपदेशक के ये संदर्भ मिले:

> मनुष्य के लिये खाने-पीने और परिश्रम करते हुए अपने जीव को सुखी रखने के सिवाय और कुछ भी अच्छा नहीं। (2:24)
>
> मैं ने जान लिया है कि मनुष्यों के लिये आनन्द करने और जीवन भर भलाई करने के सिवाय, और कुछ भी अच्छा नहीं; और यह भी परमेश् वर का दान है कि मनुष्य खाए-पीए और अपने सब परिश्रम में सुखी रहे। (3:12-13)

> सुन, जो भली बात मैं ने देखी है, वरन् जो उचित है, वह यह कि मनुष्य खाए और पीए और अपने परिश्रम से जो वह धरती पर करता है, अपनी सारी आयु भर जो परमेश् वर ने उसे दी है, सुखी रहे; क्योंकि उसका भाग यही है। वरन् हर एक मनुष्य जिसे परमेश् वर ने धन सम्पत्ति दी हो, और उनसे आनन्द भोगने और उसमें से अपना भाग लेने और परिश्रम करते हुए आनन्द करने की शक् ति भी दी हो: यह परमेश् वर का वरदान है। इस जीवन के दिन उसे बहुत स्मरण न रहेंगे, क्योंकि परमेश् वर उसकी सुन सुनकर उसके मन को आनन्दमय रखता है। (5:18-20)

> तब मैं ने आनन्द को सराहा, क्योंकि सूर्य के नीचे मनुष्य के लिये खाने–पीने और आनन्द करने को छोड़ और कुछ भी अच्छा नहीं। (8:15)

मुझे यह एहसास होने लगा कि मेरी अधिकांश "विश्वासयोग्यता" असल में विश्वासघात थी। इन वचनों के बारे में, एक लेखक लिखता है, "क्योंकि परमेश्वर आनन्द करने की आज्ञा देता है, इसलिए वह हमसे अपने सभी वरदानों के उपयोग के बारे में हिसाब लेगा, जिसमें यह भी शामिल है कि क्या हमने उनका वैसे ही आनन्द लिया है, जैसा हमें लेना चाहिए था।".[13]

सीमा का अर्थ समझने से मुझे यह एहसास हुआ कि विश्वासयोग्यता केवल वह नहीं है, जिसे मैं करता हूँ, बल्कि यह है कि मैं उन बातों का कैसे आनन्द लेता हूँ और उनके लिए परमेश्वर को कैसे धन्यवाद देता हूँ, जो उसने मेरे लिए पहले ही कर दी हैं और जो वह हर दिन मुझे देता रहता है। आनन्द को जमा करके नहीं रखा जा सकता, बल्कि विश्वासयोग्यता का एक भाग बस हर उस छोटी और भली बात को परमेश्वर की ओर से एक वरदान के तौर पर स्वीकार करना है, जिसका आनन्द वर्तमान में लिया जाए, और कभी-कभी, इसका अर्थ सीमाएँ निर्धारित करना और अगली बात के लिए न कहना होता है, जिससे कि वर्तमान बात का पूरी तरह से आनन्द लिया जाए।

तब पर भी, भले ही हमारे पास विश्वासयोग्यता की बाइबल आधारित समझ हो, परन्तु न कहने में हमें अब भी इसलिए मुश्किल हो सकती है, क्योंकि इसकी जड़ में छिपा मुद्दा हमेशा हमारे हृदय से जुड़ा होता है, जिस पर हम आगे बात करेंगे।

मनन के लिए प्रश्न:

1. आपके लिए "विश्वासयोग्य" होने का क्या अर्थ है? जीवन के अलग-अलग क्षेत्रों में विश्वासयोग्यता के बारे में बाइबल के न्यूनतम मानकों ने इस बात को किस तरह चुनौती दी है या इसे सही साबित किया है?
2. अपने जीवन के किन क्षेत्रों में आपको विश्वासयोग्य रहना आसान लगता है? अपने जीवन के किन क्षेत्रों में आपको विश्वासयोग्य रहना कठिन लगता है?
3. क्या आपको आराम और आनन्द के पल बिताने पर दोषी महसूस होता है? विश्वासयोग्यता के भाग के तौर पर आनन्द का आपके लिए क्या अर्थ होगा?

3

आपको न कहने में मुश्किल क्यों होती है? (हृदय)

मूर्तिपूजा की परिभाषा

टिम केलर इस तरह से मूर्ति को परिभाषित करते हैं: "अपने हृदय की गहराइयों में जो कुछ भी आप देखते और कहते हैं कि 'यदि मेरे पास यह हो, तब मुझे लगेगा कि मेरी जीवन का कोई अर्थ है, तब मुझे मालूम होगा कि मेरा कोई मोल है, तब मैं महत्वपूर्ण और सुरक्षित महसूस करूँगा।'" [14] हममें से कई लोगों के लिए, हमारी मूर्तिपूजा कामों पर आधारित होती है (कि हमारे काम हमें वह दिला सकते हैं, जिन्हें हम चाहते हैं) या यह मनुष्य पर आधारित होती है (कि दूसरे लोग हमें वह दिला सकते हैं, जिन्हें हम चाहते हैं)—या सम्भवत: हमारी मूर्तियाँ इन दोनों का मिला-जुला रूप होती हैं।

परन्तु न कहने से मूर्तिपूजा का क्या सम्बन्ध है?

कामों पर आधारित मूर्तिपूजा

न कहने में मुश्किल अक्सर उस अपनी उस छवि के कारण होती है, जो कहती है कि "मैं काबिल हूँ।" हमें बार-बार स्वयं पर और दूसरों पर यह साबित करने की आवश्यकता महसूस होती है और ऐसा हम उन अवसरों के लिए हाँ कहकर करते हैं, जो हमारी काबिलियत दिखाते हैं।

न कहना: रिश्ते खराब किए बिना सीमाओं को निर्धारित करना

एक अलग विचार से, न कहना उस बात के विपरीत होगा, जिसे हम स्वयं को समझते हैं, क्योंकि जो हम करते हैं, उसी में हम अपने जीवन का अर्थ, मोल और महत्व देखते हैं। परन्तु यदि हम मसीह में हैं, तो हम वह नहीं हैं, जो हम करते हैं, बल्कि हम वह हैं जो मसीह ने हमारे लिए किया है।

जहाँ तक मेरी बात है, तो मैंने स्पष्ट रूप से "काबिलियत" की भाषा में नहीं, बल्कि "विश्वासयोग्यता" की भाषा में सोचा। परन्तु यह तो केवल कामों पर आधारित धार्मिकता का ही एक बपतिस्मा लिया हुआ रूप था (जिसे अर्थ, मोल, महत्व, सुरक्षा या किसी भी दूसरी बात के लिए, जिसे हम अपने कामों से पाने की अपेक्षा करते हैं, अनुकूल स्थिति के रूप में समझा जा सकता है)।

यदि हम मसीही हैं, तो हम जानते हैं कि हमारी धार्मिकता हमारी अपनी नहीं है, और न ही यह हमारे अपने भले कामों से आती है। आखिरकार, पौलुस लिखता है, "कोई धर्मी नहीं, एक भी नहीं" (रोमि. 3:10)। इसके बजाय, हमारी धार्मिकता मसीह में और हमारी लिए किए गए उसके सिद्ध कार्य में है, जिसका अर्थ है कि "परमेश्   वर की वह धार्मिकता जो यीशु मसीह पर विश्   वास करने से सब विश्   वास करनेवालों के लिये है" (रोमि. 3:22)।

हम यह जानते हैं। हम इस पर विश्वास करते हैं। और तब पर भी, किसी न किसी तरह हम अक्सर इसे भूल जाते हैं।

हमारी विश्वासयोग्यता उन सब बातों पर जिनके लिए हम हाँ कहते हैं और उन सब बातों पर जिन्हें हम पूरा करते हैं, निर्भर नहीं करती।

बल्कि, जब एक दिन हम अपने स्वामी के मुख से ये शब्द सुनेंगे, "धन्य, हे अच्छे और विश्   वासयोग्य दास," तो यह हमारे उन सब विश्वासयोग्य कार्यों के कारण नहीं, परन्तु यीशु मसीह के उस सिद्ध कार्य के कारण होगा, जो विश्वास के द्वारा हमारे लेखे में गिना गया है।

वह विश्वासयोग्य है, और इसलिए हमें विश्वासयोग्य गिना जाता है।

जब हम इस महिमामय सच्चाई को याद रखते हैं, तो हमें अपनी विश्वासयोग्यता कमाने या साबित करने की आवश्यकता नहीं होती। इसके बजाय, हम न कह सकते हैं और भरोसा रख सकते हैं कि हमारी विश्वासयोग्यता हमारे प्रभु और उद्धारकर्ता यीशु मसीह में पहले से ही हमेशा के लिए सुरक्षित है।

न कहने की इस प्रक्रिया के लिए सीमाएँ निर्धारित करना महत्वपूर्ण है। काम पर स्वस्थ सीमाएँ निर्धारित करके, हम स्वयं पर आवश्यकता से अधिक जिम्मेदारियाँ लेने और जीवन के अधिक महत्वपूर्ण पहलुओं की, जिनमें मसीह के साथ हमारा रिश्ता भी शामिल है, उपेक्षा करने से बच सकते हैं। काम पर सीमाएँ निर्धारित करने के बारे में जानना एक चुनौती हो सकती है, परन्तु यह हमारे मानसिक और आत्मिक कल्याण की रक्षा के लिए बहुत आवश्यक है, जिससे कि यह सुनिश्चित हो कि हम कामों पर आधारित मूर्तिपूजा के बोझ तले न दब जाएँ या उससे प्रेरित न हो जाएँ। काम पर सीमाएँ बाँधना केवल समय को सीमित करना नहीं, बल्कि इसका अर्थ यह बताना है कि वास्तव में कौन सी बात महत्व रखती है, और यह आराम, रिश्तों और चिन्तन के लिए अपने समय की रक्षा करना भी है।

डी. मार्टिन लॉयड-जोन्स 20वीं सदी के सबसे उत्तम पास्टरों और प्रचारकों में से एक थे। और तब पर भी, अपने जीवन के अन्तिम वर्षों में, जब वे प्रचार करने में सक्षम न रहे, तो उनके मित्र इयान मुरे ने उनसे अपनी मुलाकात के बारे में ये बातें बताईं:

> जब मैं उनके कमरे में पहुँचा, तो उनके पास एक सन्देश था। यह मेरे लिए एक सन्देश था, और वह एक ऐसा सन्देश था, जिसे वह वास्तव में स्वयं को ही सुना रहे थे: "वे सत्तर आनन्द करते हुए लौटे और कहने लगे, "हे प्रभु, तेरे नाम से दुष् टात्मा भी हमारे वश में हैं।" हमारे प्रभु ने कहा, "तौभी इससे आनन्दित मत हो कि आत्मा तुम्हारे वश में हैं, परन्तु इस से आनन्दित हो कि तुम्हारे नाम स्वर्ग पर लिखे हैं।" उस सन्देश की शिक्षा में उन्होंने कहा कि यदि ऐसा है कि हम अपने कामों के सहारे जी रहे हैं, और यदि हमारी प्रसन्नता हमारे प्रचार करने पर या मसीह के लिए हमारी सेवा पर आधारित है, तो इसमें कुछ बहुत बड़ी गड़बड़ है। हमारा प्रभु कहता है कि "इससे आनन्दित मत हो कि आत्मा तुम्हारे वश में हैं, परन्तु इस से आनन्दित हो कि तुम्हारे नाम स्वर्ग पर लिखे हैं।" एक प्रचारक की असली परीक्षा उस समय होती है, जब वह प्रचार नहीं कर सकता, और तब उसे कैसा महसूस होता है। प्रचार करने के सहारे जीवन बिताना एक प्रचारक के लिए सचमुच एक फंदा है। लोग अब मुझसे कहते हैं, 'प्रचार करने में सक्षम न होना आपके लिए बड़ी दु:ख की बात होगी।' और वे उत्तर देते, 'बिलकुल भी नहीं, मैं प्रचार करने के सहारे जीवन नहीं जी रहा था। मैं आनन्दित हो सकता हूँ, और होता भी हूँ।'.[15]

न कहने के लिए, हमें यह जानना होगा कि हम उन बातों के सहारे नहीं जी रहे हैं, जिनके लिए हम हाँ कहते हैं। यह मायने नहीं रखता कि हमारी गतिविधियाँ कितनी अधिक वरदान-प्राप्त या कितनी अधिक फलदायी रही हैं; हम अपने कामों में नहीं, बल्कि मसीह में और हमारी ओर से किए गए उसके सिद्ध कार्य में विश्राम करते हैं और आनन्दित होते हैं।

मनुष्य पर आधारित मूर्तिपूजा

एक और कारण जिससे हमें न कहने में मुश्किल हो सकती है, वह मनुष्यों का डर—या दूसरों के द्वारा प्रेम किए जाने, स्वीकार किए जाने, चाहे जाने या आवश्यकता महसूस किए जाने की अभिलाषा है।

यदि हम लोगों को न कहते हैं, तो हमें उन दुष्परिणामों का डर लगा रहता है, जिन्हें लोग हम पर थोप सकते हैं। वे हमसे अपना प्रेम और स्वीकृति छीन सकते हैं—या हमें और भी बुरे तरीकों से चोट पहुँचा सकते हैं। यदि हम लोगों को हाँ कहते हैं, तो हम उन लाभों की अपेक्षा करते हैं, जो लोग हमें दे सकते हैं। वे हमारे प्रति अपने प्रेम और स्वीकृति की पुष्टि कर सकते हैं—या और तरीकों से हमारी सहायता कर सकते हैं।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि इन सब के साथ समस्या यह है कि हम "लोगों को परमेश्वर से 'बड़ा' (अर्थात्, अधिक सामर्थी और महत्वपूर्ण) समझते हैं।"[16] परन्तु पवित्रशास्त्र हमें इस प्रकार की सोच के प्रति बार-बार चेतावनी देता है।

> मनुष्य का भय खाना फन्दा हो जाता है, परन्तु जो यहोवा पर भरोसा रखता है उसका स्थान ऊँचा किया जाएगा। (नीति. 29:25)
>
> तुम प्रधानों पर भरोसा न रखना, न किसी आदमी पर, क्योंकि उस में उद्धार करने की भी शक् ति नहीं। उसका भी प्राण निकलेगा, वह भी मिट्टी में मिल जाएगा; उसी दिन उसकी सब कल्पनाएँ नष् ट हो जाएँगी। क्या ही धन्य वह है, जिसका सहायक याकूब का परमेश् वर है, और जिसका भरोसा अपने परमेश् वर यहोवा पर है। वह आकाश और पृथ्वी और समुद्र और उनमें जो कुछ है, सब का कर्ता है; और वह अपना वचन सदा के लिये पूरा करता रहेगा। (भज. 146:3-6)

> इसलिये तुम मनुष्य से परे रहो जिसकी श् वास उसके नथनों में है, क्योंकि उसका मूल्य है ही क्या? (यशा. 2:22)
>
> यहोवा यों कहता है: "स्रापित है वह पुरुष जो मनुष्य पर भरोसा रखता है, और उसका सहारा लेता है, जिसका मन यहोवा से भटक जाता है। वह निर्जल देश के अधमरे पेड़ के समान होगा और कभी भलाई न देखेगा। वह निर्जल और निर्जन तथा लोनछाई भूमि पर बसेगा। "धन्य है वह पुरुष जो यहोवा पर भरोसा रखता है, जिसने परमेश् वर को अपना आधार माना हो। वह उस वृक्ष के समान होगा जो नदी के किनारे लगा हो और उसकी जड़ जल के पास फैली हो; जब धूप होगी तब उसको न लगेगी, उसके पत्ते हरे रहेंगे, और सूखे वर्ष में भी उनके विषय में कुछ चिन्ता न होगी, क्योंकि वह तब भी फलता रहेगा।" (यिर्म. 17:5-8)

स्पष्ट रूप से कहें तो दूसरों की आवश्यकता तो सृष्टि की रचना में ही निहित है (उत्प. 2:18), परन्तु उस आवश्यकता का विकृत हो जाना पतन का ही एक परिणाम है (उत्प. 3:16)। यह मुद्दा तो मंशा का और उद्देश्य का है। परमेश्वर ने हमें इस तरह रचा है कि हमें उसकी महिमा करने के लिए दूसरों के साथ प्रेमपूर्ण रिश्तों की आवश्यकता हो (यूह. 13:35),[17] परन्तु अपने पाप में, दूसरों के साथ सम्बन्ध बनाने की हमारी मंशा अब अपने आप पर केन्द्रित हो गई है, और इसका उद्देश्य केवल स्वयं को अच्छा महसूस कराना या स्वयं को आगे बढ़ाना हो गया है (याकू. 4:1-3)। या इसे दूसरे तरीके से कहें तो: "दूसरे लोगों के मामले में, हमारी समस्या यह है कि हम उन्हें परमेश्वर की महिमा के लिए *प्रेम* करने से बढ़कर, अपने लिए *चाहते* हैं। परमेश्वर हमें उनकी *चाह* कम करने और उनसे *प्रेम* अधिक करने का काम सौंपता है।"[18]

मनुष्यों का डर दूर करने और परमेश्वर की महिमा के लिए लोगों के साथ सही रिश्ते बनाने हेतु, परमेश्वर को हमारी दृष्टि में "और भी महान" बनना होगा। जब हम यीशु मसीह के मुख में प्रभु की महिमा को निहारते हैं (2 कुरि. 3:18; 4:6), तो लोग अपने सही अनुपात में सिमट जाते हैं, और परमेश्वर की महिमा करने की हमारी अभिलाषा बढ़ जाती है।

इस संदर्भ में, सीमाएँ निर्धारित करना आवश्यक हो जाता है। सीमाओं का अर्थ समझना हमें दूसरों के साथ इस तरह से जुड़ने में सहायता करता है, जो उन्हें हमारे ऊपर अनुचित सामर्थ्य या महत्व की

स्थिति में नहीं रखता। इसके बजाय, हम अपने रिश्तों में स्वस्थ सीमाएँ निर्धारित करते हैं—जो लोगों को दूर भगाने के लिए नहीं, परन्तु यह सुनिश्चित करने के लिए होता है कि हमारी पहली प्राथमिकता दूसरों से अपनी बड़ाई करवाना नहीं, बल्कि परमेश्वर की महिमा करना है।

व्यक्तिगत् रूप से, मैं कई ऐसी परिस्थितियों में रहा हूँ, जहाँ मुझे न कहना पड़ा, और उसे हमेशा अच्छी तरह से स्वीकारा नहीं गया। मैंने उन लोगों को न कहा है, जो हमारी कलीसिया से जुड़ना चाहते थे, और उन्होंने अपने विश्वास का कोई भरोसेमन्द सबूत नहीं दिया (जैसे कि उद्धार के लिए केवल मसीह को ही एकमात्र मार्ग न मानना, एक परमेश्वर को तीन व्यक्तित्वों में न मानना, या क्रूस पर मसीह के काम को दण्ड के बदले में प्रायश्चित के रूप में न समझना)। मैंने एक विश्वासी और एक अविश्वासी के बीच विवाह करवाने से मना कर दिया (1 कुरि. 7:39)। (एक तरह से) मैंने उन विश्वासियों को भी न कहा, जो खुल्लमखुल्ला पाप में जी रहे थे।

इन परिस्थितियों में सीमाएँ निर्धारित करना हमेशा आसान नहीं था, परन्तु यह आवश्यक था। अक्सर, सीमा ठहराने का अर्थ तब और अधिक साफ हो गया, जब मुझे समझ आया कि न कहना किसी को ठुकराना नहीं है, बल्कि परमेश्वर की बुलाहट और उसके सत्य के प्रति विश्वासयोग्य रहने का एक तरीका है। मैंने महसूस किया कि ये सीमाएँ निर्धारित करने से मुझे मनुष्यों के डर के आगे झुकने के बजाय प्रभु के प्रति अपनी विश्वासयोग्यता बनाए रखने में सहायता मिली।

और उन पलों में जब मनुष्यों का डर मेरे भीतर घर करने लगता है, तो मैं अक्सर पहले से ही सबसे बुरे हालात के बारे में सोच लेता हूँ ("वे मुझ पर चिल्लाएँगे, वे मुझे बताएँगे कि मैं कितना बुरा व्यक्ति हूँ, वे मेरी बदनामी करेंगे, वे मुझे नौकरी से निकाल देंगे, वे मुझे अकेला छोड़ देंगे"), परन्तु फिर मैं अपने में विचार करता हूँ, "परन्तु यदि मेरे पास मसीह है, तो मैं ठीक रहूँगा।" और फिर, मैं उसी बात का अनुसरण करता हूँ, जिसे मैं परमेश्वर की सबसे अधिक महिमा करने वाला मानता हूँ—चाहे वह न कहना हो या कोई और कदम उठाना हो।

वास्तविकता यह है कि जितना हम मनुष्यों से डरते हैं, प्रभु हमारे साथ उससे कहीं अधिक बुरा कर सकता है और उसे करना भी चाहिए (मत्ती 10:28)। और तब पर भी, हमारे पापों के लिए हमें वह दण्ड देने के बजाय जिसके हम हकदार हैं, हममें से जो लोग मसीह में हैं, वह हमारे पापों को क्षमा

कर देता है, हमारी शर्म को ढाँप लेता है, हमें बच्चों के रूप में गोद ले लेता है, हमसे विरासत का वादा करता है, और हमारा निज धन होने के लिए स्वयं को दे देता है।

जब हमें पता चलता है कि हम एक पवित्र परमेश्वर के सामने पापी के रूप में खड़े हैं, तो हमें डर और आतंक से भर जाना चाहिए। परन्तु जब हमें पता चलता है कि मसीह ने हमें हमारे स्वर्गीय पिता के सामने बेटे-बेटियाँ बना दिया है, तो हमें विस्मय, श्रद्धा, भक्ति, भरोसे और आराधना से भर जाना चाहिए।[19]

अपनी प्रार्थनाओं में, मैं अक्सर स्वयं को इस अद्भुत काम की याद दिलाता हूँ: "हे परमेश्वर, यद्यपि मैं एक दीन-हीन पापी हूँ, तौभी मुझे अपना प्रिय पुत्र बनाने के लिए तेरा धन्यवाद।"

सुसमाचार में इस बराबरी के बारे में अक्सर विचार करें और देखें कि कैसे मनुष्यों का डर (या कोई भी दूसरा डर) मसीह के साथ आपकी संगति की पृष्ठभूमि में फीका पड़ने लगता है: "उसकी शाश्वत भुजाओं का सहारा लिए हुए, मैं किस बात से आतंकित होऊँ, मैं किस बात से डरूँ? उसकी शाश्वत भुजाओं का सहारा लिए हुए, मुझे अपने प्रभु के साथ उसके इतने समीप रहते हुए धन्य शान्ति मिली है।"[20]

मनन के लिए प्रश्न:

1. काम पर आधारित मूर्तिपूजा से आप कैसे संघर्ष करते हैं? आपके विचार से आपके कामों से आपको क्या मिल सकता है? यीशु मसीह का सुसमाचार आपके अपने कामों को देखने के तरीके को नयी दिशा कैसे देता है?
2. मनुष्य पर आधारित मूर्तिपूजा से आप कैसे संघर्ष करते हैं? आपके विचार से दूसरे लोग आपको क्या दे सकते हैं? यीशु मसीह का सुसमाचार आपके दूसरे लोगों को देखने के तरीके को नयी दिशा कैसे देता है?

4

आप न कैसे कहते हैं?

अब जब हमने मन और हृदय, दोनों पर बात कर ली है, तो अब हम न कहना आरम्भ करने के लिए तैयार हैं। परन्तु आप किसी से रिश्ते खराब किए बिना अपनी सीमाएँ कैसे निर्धारित करते हैं?

यहाँ कुछ सुझाव दिए गए हैं कि न कहने से पहले, उसके दौरान और उसके बाद आपको किन बातों पर विचार करना चाहिए।

न कहने से पहले

1. योजना बनाएँ कि सबसे पहले आप किस बात के लिए हाँ कहेंगे।

याद रखें कि न कहना एक ऐसा साधन है, जो आपको परमेश्वर की महिमा करने वाला जीवन जीने में सहायता करता है—और आपका जीवन उन बातों में ही जिया जाता है, जिनके लिए आप हाँ कहते हैं। इस कारण, न कहने से पहले, जिन बातों के लिए आपको हाँ कहना है, उन बात पर मनन कर लें और अपने कार्यक्रम में उन बातों की योजना सबसे पहले बनाएँ।

हर दिन जिस सबसे पहली बात के लिए आपको हाँ कहना चाहिए, वह प्रभु के वचन में और प्रार्थना में उसके साथ संगति करना है। यह सबसे स्पष्ट सीमा-निर्धारण है, जिसे यीशु ने अपनी सांसारिक सेवा के दौरान स्थापित किया था (लूका 5:15-16); यहाँ तक कि उसने अपने जीवन के महत्वपूर्ण मोड़ों पर इसके लिए लम्बा समय भी अलग रखा (लूका 4:1-13; 22:39-46)।

एक मसीही के तौर पर अपने जीवन के आरम्भ में, मैंने यह संकल्प लिया था कि जब तक मैं हर सुबह प्रभु के साथ समय नहीं बिता लूँगा, तब तक भोजन नहीं करूँगा। मैं यह तो नहीं कह सकता कि मैंने बिना किसी चूक के इसका पालन किया है, परन्तु इन वर्षों में, इसने मेरे भीतर एक आवश्यक सत्य को गहराई से बिठा दिया है: "मनुष्य केवल रोटी ही से नहीं, परन्तु हर एक वचन से जो परमेश्वर के मुख से निकलता है, जीवित रहेगा" (मत्ती 4:4)।

इसके अलावा, हर व्यक्ति के अनुसार हमारे कार्यक्रमों में काफी भिन्नता होगी, परन्तु जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में विश्वासयोग्यता के सम्बन्ध में बाइबल के द्वारा निर्धारित न्यूनतम मानकों को हमेशा ध्यान में रखें।

यह भी ध्यान रखें कि सिद्धान्तों को विशिष्ट रूपों में ही जिया जाता है, इसलिए आपको इस बात पर विचार करना होगा कि आप बाइबल के सिद्धान्तों को अपने जीवन में *कैसे* जीएँगे, और उन विशिष्ट रूपों की योजना अपने कार्यक्रम में *कैसे* बनाएँगे (जैसे कि, रात के भोजन के समय पूरे परिवार के साथ मिलकर आराधना करना, जहाँ आप बाइबल पढ़ेंगे, कोई गीत गाएँगे और एक साथ मिलकर प्रार्थना करेंगे)।

2. अपनी सीमाओं को पहचानें।

यदि आपको न कहने में मुश्किल होती है, तो सम्भवत: आपको अपनी सीमाबद्धता को स्वीकार करने में भी मुश्किल होती होगी। हम जानते हैं कि हम सर्वव्यापी, सर्वज्ञानी या सर्वसामर्थी नहीं हैं, परन्तु इस बात को सच में स्वीकार करने में हमें मुश्किल होती है। वास्तविकता यह है कि हम हर बात के लिए हाँ नहीं कह सकते और फिर भी जीवन के सब क्षेत्रों में विश्वासयोग्य नहीं रह सकते। किसी न किसी बात की तो कुर्बानी देनी ही पड़ेगी।

सेमिनरी पूरी करने में मुझे ग्यारह वर्ष लग गए—और यह बात मैं किसी गर्व के साथ नहीं कह रहा (यद्यपि परमेश्वर की स्तुति हो कि मैंने इसे पूरा कर लिया!)। एक ही वर्ष में मैंने सेमिनरी आरम्भ की, और पास्टर भी बन गया। अगले ही वर्ष मेरा विवाह हो गया और मुझे एक अन्य कलीसिया आरम्भ करने के लिए भेज दिया गया (मैं निश्चित रूप से किसी को भी ऐसी सलाह नहीं दूँगा)। उसके बाद के वर्षों में हमारे बच्चे होने लगे और मुझे कलीसिया में हर प्रकार की मुश्किलों का सामना करना पड़ा।

मुझे जल्दी ही एहसास हो गया कि या तो मेरे परिवार को, या हमारी कलीसिया को, या फिर मेरी सेमिनरी को नुकसान उठाना पड़ेगा, इसलिए मैंने सोचा कि सेमिनरी के मामले में धीरे-धीरे आगे बढ़ना ही सबसे अच्छा रहेगा।

आप सब कुछ एक साथ नहीं कर सकते, अत: आपको बुद्धिमानी से चुनाव करना चाहिए।

3. बुद्धि के लिए प्रार्थना करें।

अक्सर हमारे सामने इतने अधिक अवसर आते हैं, जिन्हें हम हाँ कह सकते हैं और फिर भी जीवन के हर क्षेत्र में विश्वासयोग्य रह सकते हैं, अत: हमें परमेश्वर से बुद्धि माँगनी चाहिए। "पर यदि तुम में से किसी को बुद्धि की घटी हो तो परमेश् वर से माँगे, जो बिना उलाहना दिए सब को उदारता से देता है, और उसको दी जाएगी" (याकू. 1:5)।

हमें पवित्रशास्त्र की उन बहुत सी चेतावनियों पर भी ध्यान देना चाहिए, जो परमेश्वर से बुद्धि माँगने के बजाय, अपनी स्वयं की बुद्धि पर भरोसा करने के विरुद्ध हैं (नीति. 3:5-7; 14:12; 16:25; यशा. 30:1-2; 31:1)।

जब आप बुद्धि के लिए प्रार्थना करें, तो यह जान लें कि इसे देने का परमेश्वर का मुख्य तरीका उसके वचन से है, अत: हमें नियमित रूप से बाइबल में डूबे रहना चाहिए (जैसे कि अकेले में पढ़ना, सबके सामने सिखाना, समूह में चर्चा करना, एक-से-एक को शिष्य बनाना), और उससे सहायता माँगनी चाहिए कि हम वचनों को, अनुच्छेदों को और पुस्तकों को उनके सही संदर्भ में समझें और उन्हें अपने जीवनों में सही रीति से लागू करें।

इसी के साथ, जब आप बुद्धि के लिए प्रार्थना करें, तो किसी ऐसे विशेष एहसास या संकेत की प्रतीक्षा न करें कि आपको क्या करना है, बल्कि आपको अपनी मंशाओं का मूल्यांकन करने का कठिन काम स्वयं करना होगा। हमें धोखे में नहीं रहना चाहिए; और उन लोगों के रूप में जिनमें अभी भी पापमय स्वभाव मौजूद है, पाप हमारी प्रेरणा को दूषित कर देता है।

भजनकार के साथ मिलकर प्रार्थना करें: "हे परमेश् वर, मुझे जाँचकर जान ले! मुझे परखकर मेरी चिन्ताओं को जान ले! और देख कि मुझ में कोई बुरी चाल है कि नहीं, और अनन्त के मार्ग में मेरी अगुवाई कर!" (भज. 139:23-24)

किसी भी पापी अभिलाषा के लिए पश्चाताप करें और प्रभु से प्रार्थना करें कि वह आपकी मंशाओं को शुद्ध करे। यदि इस निर्णय के द्वारा परमेश्वर की महिमा करना ही आपकी सच्ची अभिलाषा है (और जहाँ तक आप परमेश्वर के वचन से बता सकते हैं, इसमें कुछ भी गलत या मूर्खतापूर्ण नहीं है), तो आप निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र हैं।[21]

4. ईश्वरीय परामर्श लें।

मुझे खुशी है कि आप इस जीवन कौशल मार्गदर्शिका को पढ़ने के द्वारा पहले से ही परामर्श ले रहे हैं, परन्तु मैं आपको इसके लिए भी प्रोत्साहित करूँगा कि आप उन अन्य ईश्वरीय भाई-बहनों से भी परामर्श लें, जो आपको व्यक्तिगत् रूप से जानते हैं।

यद्यपि अनजाने में, तौभी हम कभी-कभी किसी ऐसे "विशेषज्ञ" से परामर्श ले लेते हैं, जो हमें अच्छी तरह नहीं जानता, और हमारी स्थिति का ऐसा संस्करण सामने रखता है, जो पहले से ही (कहने का अर्थ है कि) उस विशेष परामर्श की ओर झुका होता है, जिसे हम सुनना चाहते हैं।

यद्यपि ऐसा उन लोगों के साथ भी हो सकता है, जो हमें अच्छी तरह जानते हैं, और जिनके पास हमारे जीवनों के लिए 360-डिग्री वाला दृष्टिकोण है और जो हमारे आसपास रहते हैं, वे इस बात को बेहतर ढंग से समझ पाएँगे कि हम कहाँ विवरणों को बढ़ा-चढ़ाकर बता रहे हैं, महत्वपूर्ण जानकारी छोड़ रहे हैं, या स्वयं को किसी बात के लिए मनाने का प्रयास कर रहे हैं। वे हमारे सोचने और जीवन जीने के तरीकों में मौजूद पद्धतियों को बेहतर ढंग से पहचान सकते हैं, अत:, उनके द्वारा दिए गए किसी भी असहमति के योग्य परामर्श को अपने आप में यह सोचकर नकारना कठिन हो जाता है कि, "वैसे, असल में वे मुझे नहीं जानते।"

हम उन लोगों से भी परामर्श लेने के लिए प्रेरित हो सकते हैं, जो हमें तो अच्छी तरह जानते हैं, परन्तु बाइबल को अच्छी तरह नहीं जानते, या जिनका जीवन बुद्धिमानी से भरा नहीं रहा है। यह ध्यान रखें कि हर परामर्श ईश्वरीय नहीं होता (1 राजा. 12:1-20)।

विशेषरूप से यदि कोई बड़े निर्णय लेने हों (जैसे, किसी से प्रेम बढ़ाना है या उससे विवाह करना है, नौकरी या शहर या कलीसिया बदलनी है, अपने बच्चों के लिए विद्यालय का कौन-सा विकल्प चुनना है, अपने पैसों का सही प्रबन्ध कैसे करना है, लोगों के बीच के अन्दरूनी झगड़ों को कैसे सुलझाना है,

इत्यादि), तो यह बुद्धिमानी होगी कि आप ऐसे लोगों से ईश्वरीय परामर्श लें, जो आपको और अपनी बाइबल, दोनों को अच्छी तरह जानते हों (नीति. 11:14; 15:22; 24:6; निर्ग. 18:13-27)।

न कहते समय

1. जिस बात की पुष्टि कर सकते हैं, उसकी पुष्टि करें।

बस इसलिए कि आप न कह रहे हैं, तो इसका अर्थ यह नहीं हो जाता कि आपको इसके विषय में अशिष्टतापूर्ण होने की आवश्यकता है। इसके बजाय, आपको जितना हो सके, उतना शिष्ट बने रहने का प्रयास करना चाहिए।

न कहते समय भी, ऐसी बहुत सी बातें हैं, जिनकी आप पुष्टि कर सकते हैं।

- आप उस व्यक्ति या रिश्ते की पुष्टि कर सकते हैं ("मेरे बारे में सोचने के लिए धन्यवाद")।
- आप उस अवसर की पुष्टि कर सकते हैं ("यह एक बढ़िया अवसर सुनाई पड़ता है")।
- आप इसे करने की अपनी इच्छा की पुष्टि कर सकते हैं ("मुझे इसे करना बहुत अच्छा लगेगा, परन्तु...")।
- आप भविष्य की सम्भावनाओं की पुष्टि कर सकते हैं ("क्षमा करें, मैं इस महीने नहीं मिल सकता, परन्तु अगले महीने मैं उपलब्ध हूँ")।

सीमाएँ निर्धारित करना हमारे रिश्तों और समर्पणों में सन्तुलन बनाए रखने का एक मुख्य भाग है। विवाह की सीमाएँ विशेष रूप से महत्वपूर्ण होती हैं, क्योंकि ये दोनों साथियों की आवश्यकताओं की रक्षा करने में यह सुनिश्चित करते हुए सहायता करती हैं कि न तो रिश्ते की अनदेखी हो और न ही व्यक्तिगत् जिम्मेदारियों की अनदेखी हो। विवाह में सीमाएँ निर्धारित करके, हम भावनात्मक और आत्मिक विकास के लिए जगह बनाते हैं, जिससे दोनों साथी अपनी-अपनी भूमिकाओं में आगे बढ़ पाते हैं और अनावश्यक तनाव से बचते हैं।

सीमाएँ निर्धारित करना न केवल विवाह में, बल्कि सभी रिश्तों में आवश्यक है। यह हमें उन बातों को—अर्थात् परमेश्वर और एक दूसरे के साथ हमारे रिश्ते को—जो सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं, बिना किसी बाहरी दबाव के बोझ तले दबे हुए प्राथमिकता देने की अनुमति प्रदान करता है।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि, यदि आपको यह कोई बढ़िया अवसर नहीं लगता, या इसे करने की आपकी कोई इच्छा नहीं है, या आप भविष्य के अवसरों में रूचि नहीं रखते हैं, तो उन बातों की पुष्टि न करें। आखिरकार, चापलूसी करना भी एक पाप है। इसके बजाय, केवल उसी बात की पुष्टि करें, जिसकी आप ईमानदारी से पुष्टि कर सकते हैं।

2. अपनी न को लेकर स्पष्ट रहें।

जब मैं पहली बार विदेश गया, तो कई बार ऐसा हुआ कि कुछ लोगों की प्रतिक्रियाओं और उनके कामों के बीच के तालमेल की कमी देखकर मैं परेशान हो जाता था। उदाहरण के लिए, यदि मैं किसी को मेरे घर आकर साथ समय बिताने के लिए बुलाता, तो वह हाँ तो कह देता, परन्तु असल में उसके आने की सम्भावना 50 प्रतिशत् ही होती थी। और यदि कोई शायद कहता, तो असल में इसका अर्थ निश्चित रूप से लगभग न ही होता था। और मुझे जल्दी ही यह समझ आ गया कि हाँ का अर्थ शायद था, और शायद का अर्थ नहीं था, और न तो कभी कहा ही नहीं जाता था। हो सकता है कि यह सांस्कृतिक अन्तरों से हो, या अपनी प्रतिष्ठा बचाने के लिए हो, या फिर सीधे-सीधे झूठ बोलने के लिए हो, परन्तु जिस पर यह सब बीतता था, उसे यह कभी भी अच्छा नहीं लगता था।

मसीह के अनुयायी के तौर पर, आपको अपनी हाँ और न के बारे में स्पष्ट रहने का प्रयास करना चाहिए (मत्ती 5:37; याकू. 5:12)। साथ ही साथ, आप न कहे बिना भी अपनी न को स्पष्ट रूप से कह सकते हैं ("मेरे बारे में सोचने के लिए धन्यवाद, परन्तु क्षमा करें, मैं उस समय उपलब्ध नहीं रहूँगा," या "यह एक बढ़िया अवसर सुनाई पड़ता है, परन्तु दुर्भाग्य से, दूसरे समर्पणों के कारण मैं इसे नहीं कर पाऊँगा")।

यदि आपको उस पल दबाव महसूस हो, तो आपको तुरन्त उत्तर देने की आवश्यकता नहीं है ("मैं आपको बाद में बताता हूँ")। और जब आपको उस अवसर के बारे में सोचने का समय मिल जाए और आप न कहने का निर्णय कर लें, तो एक ईमेल या सन्देश भेजकर विनम्रता से उस अवसर को नकार दें।

यदि आप ऐसी स्थिति में हैं जहाँ आप काम पर अपने प्रबन्धक को न कह रहे हैं, तो सीमाएँ निर्धारित करना आवश्यक है। आप उन्हें की जाने वाली उस आवश्यक अदला-बदली के बारे में सोचने के लिए

प्रेरित करके सीमाएँ निर्धारित कर सकते हैं, जिससे कि आपकी हाँ का अर्थ किसी दूसरी बात के लिए न हो ("हाँ, मैं इसे प्राथमिकता दे सकता हूँ। और इसे पूरा करने के लिए मैं और किस बात को कम प्राथमिकता दूँ?")। यदि आवश्यक हो, तो आप उस काम का और भी विवरण साझा कर सकते हैं, जिस पर आप अभी काम कर रहे हैं और सुझाव दे सकते हैं कि और किस बात को कम प्राथमिकता दी जा सकती है ("निश्चय ही, मैं पहली परियोजना को प्राथमिकता दे सकता हूँ। इस समय पर मैं दूसरी और तीसरी परियोजना पर काम कर रहा हूँ। तो क्या मैं पहली परियोजना को पूरा करने के लिए, तीसरी परियोजना को कम प्राथमिकता दूँ?")। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह परिदृश्य केवल तभी सम्भव है, जब आपका प्रबन्धक पहले से ही आपको एक व्यवस्थित, परिश्रमी और भरोसेमन्द कर्मचारी मानता हो। यदि आप ऐसे ही हैं और आपका वर्तमान कार्यस्थल आपके न को स्वीकार नहीं करता, और विशेष रूप से यदि इस कारण से आप जीवन के दूसरे क्षेत्रों में बाइबल की विश्वासयोग्यता के न्यूनतम मानकों को पूरा नहीं कर पा रहे हैं, तो शायद आपको दूसरी नौकरी के अवसरों पर विचार करना चाहिए।

यदि आप ऐसी स्थिति में हैं, जहाँ कोई व्यक्ति आपकी स्पष्ट न को स्वीकार करता हुआ प्रतीत नहीं होता, तब भी आप दृढ़ और दयालु बने रह सकते हैं ("क्षमा करें, अपने दूसरे समर्पणों का आदर करते हुए, मुझे इसे नकारना पड़ेगा")।

3. जहाँ आप सहायता कर सकते हैं, वहाँ सहायता करें।

यह अभी भी उस बात के लिए न कहना है, जिसकी माँग की गई थी, परन्तु यह किसी कम 'महँगी' बात के लिए हाँ कहना है।

जिन लोगों ने मुझे बस कुछ संसाधन भेजे या मुझे दूसरों से जोड़ा, उनसे मुझे बहुत अधिक लाभ हुआ है, अत:, भले ही मुझे किसी बात के लिए न कहना पड़े, फिर भी मैं हर तरीके से सहायता करने का प्रयास करता हूँ।

उदाहरण के लिए, मेरी कलीसिया के बाहर के किसी व्यक्ति ने मुझे उनके द्वारा प्रचार किया गया एक उपदेश भेजा (वे कोई पास्टर नहीं थे), और पूछा कि क्या मैं उसे सुनकर उस पर अपनी राय दे सकता हूँ, और सन्देश में मैंने जो प्रतिक्रिया दी, वह यह थी:

> मेरे बारे में विचार करने के लिए धन्यवाद, और मैं इस बात की सराहना करता हूँ कि आप मेरी राय को महत्व देते हैं। जैसा कि मुझे ऐसा करना बहुत अच्छा लगता, परन्तु मुझे क्षमा करें कि मैं अपनी राय नहीं दे पाऊँगा, क्योंकि इस समय मेरे पास बहुत काम है। यहाँ उस प्रचार के पाठ्यक्रम के मेरे नोट्स हैं, जिसे मैंने ब्रायन चैपल से सीखा था, और हो सकता है कि ये आपके लिए सहायक हों: [मेरे नोट्स का लिंक]

एक अन्य उदाहरण के तौर पर, किसी ने मुझसे एक सम्मेलन में प्रचार करने के लिए कहा, जिसमें मैं शामिल होने की योजना बना रहा था, और ईमेल में मैंने जो प्रतिक्रिया दी वह यह थी:

> अक्तूबर महीने में [सम्मेलन का नाम] में मुझे बोलने हेतु आमंत्रित करने के लिए धन्यवाद; मैं सम्मानित महसूस कर रहा हूँ। जैसा कि मुझे ऐसा करना बहुत अच्छा लगता, परन्तु मैं अभी भी अत्यधिक थकान से स्वस्थ रहा हूँ, और यह विशेष रूप से मेरे लिए एक बहुत ही व्यस्त दौर रहेगा। मुझे क्षमा करें कि मैं बोल नहीं पाऊँगा, परन्तु क्या मैं [किसी दूसरे व्यक्ति के लिए] सुझाव दे सकता हूँ? मुझे लगता है कि वह भी आपकी आवश्यकता के हिसाब से सही रहेगा। यदि आपके मन में कोई और व्यक्ति है, तो चिन्ता की कोई बात नहीं, परन्तु एक सम्भावित विकल्प के तौर पर उसका नाम मेरे मन में आया। मैं आपकी समझ की सराहना करता हूँ और [सम्मेलन का नाम] में आपसे मिलने की प्रतीक्षा करूँगा। आपके इस विचारशील निमंत्रण के लिए फिर से धन्यवाद।

आपको कभी यह नहीं सोचना चाहिए कि आप ही अकेले ऐसे व्यक्ति हैं, जो सहायता कर सकते हैं। कई बार, लोग बस सहायता चाहते हैं और उन्हें इस बात की अधिक परवाह नहीं होती कि सहायता सीधे आपकी तरफ से ही आए।

4. धन्यवाद व्यक्त करें।

कभी-कभी हम यह भूल जाते हैं कि किसी के लिए सहायता माँगना हमेशा आसान नहीं होता। सम्भव है कि आपके पास आने के लिए उन्हें अपनी चिन्ता, असुरक्षा या गर्व से लड़ना पड़ा हो। किसी भी मामले में, यह तथ्य कि सब लोगों में से उन्होंने सहायता के लिए आपको चुना, यह आपको सम्मानित

करने का एक रूप है। उन्हें लगता है कि आप उनकी सहायता कर सकते हैं; अन्यथा, वे आपसे नहीं पूछते।

भले ही आप न कह दें, फिर भी उस व्यक्ति, उस रिश्ते और उस अवसर के प्रति सराहनीय बनें रहें—और धन्यवाद व्यक्त करने का पूरा प्रयास करें।

यह केवल एक औपचारिक या विनम्र धन्यवाद नहीं है, बल्कि इस बात पर विचार करें कि सभी परिस्थितियों में धन्यवाद देना हमारे लिए प्रभु की इच्छा क्यों हो सकती है (1 थिस्स. 5:18)।

न कहने के बाद

1. परमेश्वर के अधिकार और भलाई पर भरोसा रखें।

न कहने के बाद, **FOMO (fear of missing out**—कुछ छूट जाने का डर) होना आसान है। "क्या होता यदि वह एक ऐसा अवसर हो, जिसे मुझे ले लेना चाहिए था? क्या होता, यदि मुझे उस व्यक्ति से मिल लेना चाहिए था?" क्या होता, यदि वाले ऐसे अन्तहीन प्रश्न हैं, जिनके बारे में हम स्वयं को परेशान कर सकते हैं। परन्तु यदि आपको भरोसा है कि परमेश्वर अधिकार रखता है और वह भला है, तो क्या होता यदि वाला कोई भी प्रश्न प्रासंगिक नहीं है।

जब आप अपने सर्वशक्तिमान और भले पिता के हाथों में हैं, तो आप अपना जीवन बर्बाद नहीं कर सकते। आपके सब दिन पहले से ही आपके लिए निर्धारित किए गए थे और इससे पहले कि उनमें से एक भी दिन अस्तित्व में आया हो, वे परमेश्वर की पुस्तक में लिखे गए थे (भज. 139:16)। उसने आपको मसीह यीशु में उन भले कामों के लिए सृजा, जिन्हें परमेश् वर ने पहले से आपके करने के लिये तैयार किया था (इफि. 2:10)।

परमेश्वर का अधिकार और भलाई दो ऐसे सत्य हैं, जो आपको किसी भी निर्णय से पहले की दुविधा और निर्णय लेने के बाद के **FOMO (fear of missing out**—कुछ छूट जाने का डर) और पछतावे से स्वतंत्र करते हैं।

2. जिस बात के लिए आपने हाँ कहा है, उसमें पूरी तरह से समर्पित हो जाएँ।

हम न इसलिए कहते हैं ताकि हम किसी और बात के लिए हाँ कह सकें।

परन्तु हर बच्चा उस निराशा को जानता है, जब वह अपने माता-पिता के साथ खेलने का प्रयास करता है, और वे किसी ऐसे काम में व्यस्त होते हैं, जिसके लिए उन्होंने बस एक मिनट का कहा था। और हर कर्मचारी उस कमजोरी को जानता है, जब वह किसी एक मुख्य काम पर ध्यान केन्द्रित करने का प्रयास करता है, परन्तु लगातार ईमेल, सन्देश या अन्य कामों को देखता रहता है, जो अचानक दिमाग में आ जाते हैं।

परमेश्वर का वचन कहता है, "जो कुछ तुम करते हो, तन मन से करो, यह समझकर कि मनुष्यों के लिये नहीं परन्तु प्रभु के लिये करते हो" (कुलु. 3:23)। यह बात केवल कार्यस्थल पर ही लागू नहीं होती, बल्कि "जो कुछ तुम करते हो"—जिस भी काम के लिए आपने हाँ कहा है—उसके लिए स्वयं को पूरा समर्पित कर दो।

अन्त में, यह अपने बच्चों को प्रसन्न करने, नियोक्ता को लाभ पहुँचाने या स्वयं को बचाने के बारे में नहीं है, बल्कि हम प्रभु की महिमा के लिए उसे हाँ कहते हैं और उसके प्रति स्वयं को पूरा समर्पित करते हैं, जिसे हमने हाँ कहा है।

सीमाएँ बनाने की जानकारी सन्तुलित जीवन जीने के लिए आवश्यक है। सीमाएँ ठहराने से हमें अपने समय और प्रतिबद्धताओं को प्राथमिकता देने में सहायता मिलती है, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि हम उन बातों के प्रति सच्चे रहें, जो सबसे अधिक महत्व रखती हैं। अपने व्यक्तिगत् और व्यावसायिक जीवन में सीमाएँ निर्धारित करके, हम अत्यधिक थकान से बच सकते हैं और परमेश्वर एवं अपने परिवार के साथ हमारे रिश्ते जैसी बातों की रक्षा कर सकते हैं।

मनन के लिए प्रश्न:

1. न कहने से पहले, क्या आपको इसकी योजना बनाने में कि आप पहले किस बात को हाँ कहेंगे, अपनी सीमाओं को जानने में, बुद्धि के लिए प्रार्थना करने में, या परमेश्वर से परामर्श लेने में संघर्ष करना पड़ता है? इसके लिए आप क्या कदम उठा सकते हैं और क्यों?
2. न कहते समय, क्या आपको उसकी पुष्टि करने में जिसकी आप क्या पुष्टि कर सकते हैं, अपनी न में स्पष्ट रहने में, जहाँ आप सहायता कर सकते हैं, वहाँ सहायता करने में, या धन्यवाद व्यक्त करने में संघर्ष करना पड़ता है? इसके लिए आप क्या कदम उठा सकते हैं और क्यों?

3. न कहने के बाद, क्या आपको परमेश्वर के अधिकार और भलाई पर भरोसा करने में, या आप जिस बात के लिए हाँ कह चुके हैं, उसके प्रति स्वयं को पूरा समर्पित करते में संघर्ष करना पड़ता है? इसके लिए आप क्या कदम उठा सकते हैं और क्यों?

निष्कर्ष

हेनरिएटा "हेटी" ग्रीन (1835-1916) को गिनीज़ बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड्स (**Guinness Book of World Records**) में "सबसे बड़ी कंजूस" के तौर पर प्रसिद्धि पाने का "सम्मान" मिला है।

अपने समय में वह संसार की सबसे धनी स्त्री थीं, जिनकी कुल सम्पत्ति 10 करोड़ डॉलर (या आज के हिसाब से 2 अरब डॉलर) थी, परन्तु वह केवल एक पुरानी काली पोशाक और अन्तर्वस्त्र पहनती थीं, जिन्हें वह तभी बदलती थीं, जब वे फट जाते थे। वह अधिकांश पंद्रह सेंट के दाम वाली पाईज़ ही खाती थीं, और एक बार तो उन्होंने अपने घर में खोया हुआ दो सेंट का एक टिकट ढूँढ़ने में पूरी रात बिता दी थी। वह कार्यालय के किराए के भुगतान से बचने के लिए अपना व्यवसाय न्यूयॉर्क के एक बैंक की तिजोरी से चलाती थीं, जहाँ उनके चारों ओर उनके कागज़ों से भरे सूटकेस रखे रहते थे। उनके बेटे को मांस के सड़ने वाली बीमारी गैंग्रीन हो गई और मुफ्त की मेडिकल क्लिनिक ढूँढ़ने में हुई देरी के कारण, उसका पैर काटना पड़ा। बुढ़ापे में उन्हें हर्निया की गम्भीर बीमारी हो गई थी, परन्तु उन्होंने ऑपरेशन करवाने से इसलिए इन्कार कर दिया, क्योंकि इसका खर्चा 150 डॉलर था।[22]

खर्च करने के मामले में, हेटी ग्रीन न कहने की रानी थीं, परन्तु बहुत कम लोग ही उनके पदचिन्हों पर चलना चाहेंगे।

जीवन इतना आसान भी नहीं है कि बस न (या हाँ) कह दिया जाए। बल्कि, जैसे-जैसे हम स्वयं को उस बात के साथ जोड़ने का प्रयास करते हैं, जो परमेश्वर ने अपने वचन में हमारे सामने प्रकट की है, तो हमें यह जानने के लिए बुद्धि की आवश्यकता पड़ती है कि परमेश्वर हमसे किस बात के लिए हाँ कहलवाना चाहता है और किस बात के लिए न कहलवाना चाहता है।

न कहना: रिश्ते खराब किए बिना सीमाओं को निर्धारित करना

जो लोग विशेष रूप से न कहने में संघर्ष करते हैं, उनके रूप में हमें जीवन के सभी क्षेत्रों में विश्वासयोग्यता के न्यूनतम मानकों की बाइबल-आधारित समझ होनी चाहिए; और हमारे हृदयों के कामों पर आधारित और मनुष्य पर आधारित मूर्तिपूजा को यीशु मसीह के सुसमाचार से सम्बोधित करना चाहिए; और यह जानना चाहिए कि न कहने से पहले, उसके दौरान और उसके बाद क्या करना है।

और हर अवसर एवं हर निर्णय के बीच, यह कभी न भूलें कि इसका लक्ष्य अपने जीवनों पर नियंत्रण पाना नहीं, बल्कि अपने जीवनों को परमेश्वर की महिमा के लिए जीना है।

जीने के लिए यही सचमुच एक सार्थक जीवन है।

अन्तिम टिप्पणियाँ

1. शोंडा राइम्स, *माइ इयर ऑफ सेइंग येस टु एवरीथिंग* (***My Year of Saying Yes to Everything***), टेड टॉक, टेड2016, फरवरी 2016, https://www.ted.com/talks/shonda_rhimes_my_year_of_saying_yes_to_everything; यह भी देखें: शोंडा राइम्स, *इयर ऑफ येस: हाउ टु डांस इट आउट, स्टैण्ड इन द सन एण्ड बी योर ओन पर्सन* (***Year of Yes: How to Dance It Out, Stand in the Sun and Be Your Own Person***) (न्यूयार्क: साइमन एण्ड चस्टर, 2015).
2. देखें: लॉरा बेक, "वॉरेन बफेट'स की टु सक्सेस: 'से नो टु ऑलमोस्ट एवरीथिंग,'" (**"Warren Buffett's Key to Success: 'Say No to Almost Everything,'"**) 7 मार्च, 2024, https://finance.yahoo.com/news/warren-buffett-key-success-no-161048764.html.
3. उदाहरण के लिए: *येस मैन* (***Yes Man***), निर्देशक: पेटन रीड (वॉर्नर ब्रदर्स पिक्चर्स, 2008), फिल्म; और *येस डे* (***Yes Day***), निर्देशक: मिगुएल आर्टेटा (नेटफ्लिक्स, 2021), फिल्म।
4. जब तक अन्यथा लिखा न गया हो, पवित्रशास्त्र के सभी उद्धरण ***Hindi OV (Re-edited)*** *Bible—पवित्र बाइबल* ***OV (Re-edited) Bible*****—Copyright © 2012 by The Bible Society of India** से लिए गए हैं।
5. एडवर्ड टी. वेल्च ("बाउण्ड्रीज़ इन रिलेशनशिप्स," *जर्नल ऑफ बिबलिकल काउंसलिंग* 22 ("Boundaries in Relationships," ***Journal of Biblical Counseling*** 22), संख्या 3 [बसन्त 2004]: 18-19) में जोर देकर कहते हैं: "गिरी हुई व्यवस्था की एक आवश्यक विशेषता अलगाव है; सुसमाचार की एक आवश्यक विशेषता एकता है। यीशु एक के

बाद एक सीमाएँ तोड़ता है, ताकि हम उन घुटन भरी दीवारों के बिना जी सकें, जिनसे हमारी एकान्त वाली जेल की कोठरियों का निर्माण होता है। उसने हमारे जैसा बनकर, सृष्टि और सृष्टिकर्ता के बीच की दीवार तोड़ दी। उसने शिष्यों को अपने साथ रहने के लिए बुलाया। उसने लोगों को अपने निकट आने के लिए आमंत्रित किया। जिन लोगों को विश्वास था, वे जानते थे कि उसने हमें उसे छूने के लिए भी आमंत्रित किया (लूका 7:25-38, 8:43-48)। उसने उस समय की सांस्कृतिक सीमाओं को तोड़ते हुए स्त्रियों, कंगालों, सताए हुए लोगों, बीमारों, मरे हुओं और दुष्टात्माओं से पीड़ित लोगों की ओर कदम बढ़ाया। वह हमें दाखलता की डाली के समान उसमें *होकर* जीवन बिताने के लिए आमंत्रित करता है (यूह. 15 अध्याय)। वह हमें आत्मा के द्वारा उसकी निरन्तर उपस्थिति का आश्वासन देता है (यूह. 16 अध्याय)। और, जब वह अपनी मृत्यु के समीप पहुँचा, तो उसने प्रार्थना की कि हम—अर्थात् कलीसिया—उसके साथ और एक दूसरे के साथ इस तरह से एक हो जाएँ कि यह एकता से भरा प्रेम, संसार के सामने परमेश्वर की अपनी गवाही बन जाए [यूह. 17:20-23]… जहाँ एक ओर पुरानी वाचा के यहूदियों के लिए संसार में बाहर जाना एक अभिशाप था, वहीं नयी वाचा के मसीहियों के लिए यह एक आज्ञा थी (मत्ती 28:19)। परमेश्वर के लोग वे हैं, जिन्हें भेजा गया है—वे संसार के लिए नमक और ज्योति हैं (मत्ती 5:13)—और वे खमीर हैं, जो पूरे आटे में फैल जाता है (लूका 13:20)। जो सीमाएँ कभी लोगों को आसपास की मूर्तिपूजा से बचाने की मंशा से बनाई गई थीं, वे अब तोड़ दी गई हैं। अब, स्वयं को बचाने के बजाय, हम पड़ोसियों और अजनबियों को उस एक को जानने के लिए आमंत्रित करते हैं, जो बाधाओं को तोड़ता है।"

6. देखें: "मैराथन पुरुष अखवारी ने अतिमानवीय भावना का प्रदर्शन किया" (**Marathon man Akhwari demonstrates superhuman spirit**,) 19 अक्तूबर, 1968, https://www.olympics.com/en/news/marathon-man-akhwari-demonstrates-superhuman-spirit; और "मैराथन मैन अखवारी ने सन् 1968 के खेलों में अपने शानदार प्रयास के बारे में कहा कि 'मैंने कभी रुकने का नहीं सोचा था,'" 20 अक्तूबर, 2020, https://www.olympics.com/ioc/news/-i-never-thought-of-stopping-marathon-man-akhwari-on-his-epic-effort-at-the-68-games.

7. जॉन मैक्सवेल, द 21 इरिफ्यूटेबल लॉज़ ऑफ लीडरशिप (**The 21 Irrefutable Laws of Leadership**) (न्यूयॉर्क: हार्परकॉलिन्स, 2007), 267.
8. पूर्वोक्त, 16.
9. विश्वासयोग्यता के न्यूनतम मानकों का यह विचार मुझे सबसे पहले सेबेस्टियन ट्रेगर और ग्रेग गिल्बर्ट की पुस्तक, द गोस्पल एट वर्क (**The Gospel at Work**) (ग्रैण्ड रैपिड्स, एम.आई.: ज़ोण्डरवान, 2018) से मिला।
10. जीवन के जिन दो और क्षेत्रों पर विचार किया जा सकता है, वे व्यक्तिगत् और सामाजिक क्षेत्र हैं। टिम चैलिस अपनी पुस्तक डु *मोर बैटर (Do More Better)* [मिनियापोलिस, एम.एन.: क्रूसिफोर्म प्रेस, 2015], 29, किण्डल) में बताते हैं: "आपको अपने पूरे जीवन के बारे में सोचना होगा और यह प्रश्न पूछते हुए बड़ी-बड़ी श्रेणियाँ बनानी होंगी: परमेश्वर के सामने, मैं किन बातों के लिए जिम्मेदार हूँ?... आपकी कुछ व्यक्तिगत् जिम्मेदारियाँ अवश्य होंगी—आपको अपने शरीर और प्राण का ध्यान रखना होगा, और आपको अपने लिए कपड़े और भोजन का प्रबन्ध करना होगा। आपकी कुछ पारिवारिक जिम्मेदारियाँ भी लगभग निश्चित रूप से होंगी, चाहे वे आपके जीवनसाथी और बच्चों से जुड़ी हों, या माता-पिता और भाई-बहनों से, या फिर इन सभी से जुड़ी हों। एक मसीही होने के नाते आप जानते हैं कि परमेश्वर ने आपको एक स्थानीय कलीसियाई समुदाय में रखा है और आपको नये नियम की उन सभी 'एक दूसरे के प्रति' वाली आज्ञाओं को पूरा करने का दायित्व सौंपा है, अत:, आपको जिम्मेदारी के लिए एक कलीसियाई क्षेत्र की भी आवश्यकता होगी। एक समर्पित मित्र और एक सुसमाचार सुनाने वाला पड़ोसी होने के तौर पर आपकी कुछ सामाजिक जिम्मेदारियाँ भी हैं। हो सकता है कि आप एक छात्र हों और आपके पास विद्यालयी जिम्मेदारियाँ हों, या आप किसी कार्यालय में उपाध्यक्ष हों और आपके पास काम की जिम्मेदारियाँ हों।"
11. नौकरी चुनने के मामले में, ट्रेगर और गिल्बर्ट ने सहायक रूप से प्रश्नों की दो श्रेणियाँ बताई हैं। पहली है "मिलनी ही चाहिए" (क्या यह नौकरी परमेश्वर की महिमा करती है? क्या यह नौकरी मुझे एक ईश्वरीय जीवन जीने की अनुमति देती है? क्या यह नौकरी मेरी आवश्यकताएँ पूरी करती है और मुझे दूसरों के लिए एक आशीष बनने देती है?) और दूसरी है "मिल जाए तो अच्छा" (क्या यह नौकरी किसी तरह से समाज को लाभ पहुँचाती है? क्या यह नौकरी मेरे

वरदानों और प्रतिभाओं का उपयोग करती है? क्या यह वही नौकरी है, जिसे मैं करना चाहता हूँ?)।

12. डोनाल्ड व्हिटनी की पुस्तक, *फैमिली वरशिप (Family Worship)* (व्हीटन, आई.एल.: क्रॉसवे, 2016) देखें।
13. बॉबी जैमिसन, *एवरीथिंग इज़ नेवर इनफ़ (Everything Is Never Enough)* (न्यूयॉर्क: वॉटरब्रुक्स, 2025), 144.
14. टिम केलर, *काउण्टरफीट गॉड्स (Counterfeit Gods)* (न्यूयॉर्क: पेंगुइन, 2009), xx.
15. इयान मुरे, जेरेमी मार्शल द्वारा उद्धृत, "डॉ. मार्टिन लॉयड-जोन्स: मृत्यु की तैयारी पर — रेव्ह. इयान मुरे द्वारा," (**"Dr Martyn Lloyd-Jones on Preparing for Death – by Rev. Iain Murray,"**) बैनर ऑफ ट्रुथ (**Banner of Truth**), 17 जुलाई, 2020, https://banneroftruth.org/us/resources/articles/2020/dr-martyn-lloyd-jones-on-preparing-for-death-by-rev-iain-murray.
16. एडवर्ड वेल्च, *वेन पीपल आर बिग एण्ड गॉड इज़ स्मॉल (When People Are Big and God is Small),* दूसरा संस्करण (फिलिप्सबर्ग, एन.जे.: पीएण्डआर, 2023), 25.
17. वेल्च बताते हैं: "परमेश्वर ने आदम और हव्वा को बनाया, यह तथ्य इस बात की ओर संकेत करता है कि मनुष्य में परमेश्वर का स्वरूप किसी एक अलौकिकता से रहित व्यक्ति में पूरा नहीं हो सकता था। परमेश्वर के स्वरूप को अकेले नहीं दर्शाया जा सकता; यह साझेदारी में ही सम्भव है। परमेश्वर की महिमा इतनी विशाल है कि वह किसी एक प्राणी में पूरी तरह से झलक नहीं सकती। परमेश्वर का स्वरूप सामूहिक है, अर्थात् हम सभी उसमें भागीदार हैं। परमेश्वर ने एक दूसरे पर निर्भर लोगों को बनाया है और यदि हमें उसकी महिमा को सबसे शानदार ढंग से झलकाना है, तो हमें एक दूसरे की आवश्यकता होगी" *(वेन पीपल आर बिग एण्ड गॉड इज़ स्मॉल (When People Are Big and God is Small),* पृष्ठ 144)।
18. पूर्वोक्त, 20.
19. पूर्वोक्त, 81.
20. एलीशा ए. होफमैन, *लीनिंग ऑन द एवरलास्टिंग आर्म्स (Leaning on the Everlasting Arms),* 1887.

21. देखें केविन डीयंग, जस्ट डू *समथिंग (**Just Do Something**)*, (शिकागो, आई.एल.: मूडी, 2009).

22. देखें डोनाल्ड मैकफार्लन, सम्पादक, द *गिनीज़ बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड्स 1991 (**The Guiness Book of World Records 1991**)* (न्यूयॉर्क: बैंटम, 1991), 336; और "इट इज़ ऑल इन द माइण्ड," (**"It is all in the mind,"**) *नेशन (**Nation**)*, 26 जून, 2008, 21 जून, 2000 को अपडेट किया गया, https://nation.africa/kenya/life-and-style/weekend/it-is-all-in-the-mind-550578.

THE MENTORING PROJECT

एरिक यी जकार्ता, इण्डोनेशिया में हार्वेस्ट मिशन कम्युनिटी चर्च में मुख्य पास्टर के रूप में सेवा करते हैं। उनका विवाह उनकी पत्नी टीना से हुआ है और उनके दो बेटे हैं।